इकाई 3 बृहत्संहिता का परिचय

इकाई की संरचना

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 आचार्य वराहमिहिर का परिचय

3.2.1 आचार्य वराहमिहिर द्वारा रचित ग्रन्थ

3.3 बृहत्संहिता ग्रन्थ का परिचय

3.3.1 बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित विषय

3.3.2 बृहत्संहिता ग्रन्थ का वैशिष्ट्य

3.4 सारांश

3.5 पारिभाषिक शब्द

3.6 सहायक पाठ्यसामग्री

3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस पाठ्यांश के अध्ययन के बाद आप :

- आचार्य वराहमिहिर का जीवन परिचय प्रदान करने में सक्षम होंगे।
- आचार्य वराहमिहिर रचित ग्रन्थों का परिचय प्रदान करने में सामर्थ्यवान् होंगे।
- बृहत्संहिता संहिता ग्रन्थ का परिचय प्रदान कर सकेंगे।
- बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित विषयों का प्रतिपादन करने में कुशल होंगे।
- बृहत्संहिता ग्रन्थ का वैशिष्ट्य प्रतिपादन करने में समर्थ होंगे।

3.1 प्रस्तावना

पूर्व के पाठ्यांश में आपने ज्योतिष शास्त्र के विभिन्न भेद प्रभेदों के सन्दर्भ में अध्ययन किया है। आपने जाना कि ज्योतिषशास्त्र के समस्त विषयों का मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजन किया गया है – १. सिद्धान्त २. संहिता ३. होरा। इनमें से संहिता स्कन्ध सर्वाधिक विस्तृत है, जिसमें अनेकों विषयों का समावेश किया गया है। और तीनों स्कन्धों में इसे सबसे अधिक प्राचीन भी माना जाता है। संहिता स्कन्ध संबंधित अनेक ग्रन्थ प्राचीन समय में रचे गये हैं। जैसे – भृगु संहिता, नारद संहिता, वशिष्ठ संहिता, वृद्धगर्ग संहिता, पाराशर संहिता इत्यादि। इनमें से अनेक ग्रन्थ आज के समय में समुपलब्ध नहीं हैं। इस प्रकार के अनेक ग्रन्थ प्राचीन काल में रचित किये गये थें। छठी शताब्दी में आचार्य वराहमिहिर ने उस समय में उपलब्ध सभी संहिता ग्रन्थों का संकलन किया तथा एक बहुत बडे ग्रन्थ का निर्माण किया, जिसका नाम उन्होंने

"बृहत्संहिता" रखा। इस ग्रन्थ में आचार्य वराहमिहिर ने साररूप में संहिता ज्योतिष के सभी विषयों को समाहित करने का प्रयास किया। बृहत्संहिता के उपरान्त भी अनेक संहिता ग्रन्थ रचित हुए परन्तु जितने विषयों का समावेश बृहत्संहिता में किया गया उतना किसी भी ग्रन्थ में प्राप्त नहीं होता है। इस ग्रन्थ का न केवल ज्योतिष शास्त्र के सन्दर्भ में महत्व है अपितु इस ग्रन्थ में वर्णित विषय उस समय की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व ऐतिहासिक विशेषताओं को भी प्रकट करता है। इस कारण इतिहास के विभिन्न विषयों को प्रतिपादित करने में भी ग्रन्थ अत्यधिक उपकारक सिद्ध हुआ है। इस पाठ्यांश में बृहत्संहिता ग्रन्थ का विस्तार से परिचय प्रदान किया जायेगा।

3.2 आचार्य वराहमिहिर का परिचय

स्वयं वराहमिहिर ने अपने जन्म स्थान के बारे में, अपने स्वयं के बारे में, अपने पिता एवं वंश के बारे में निम्न शब्दों में प्रकाश डाला है।

वराहमिहिर ने अपने आपको अवन्तिकावासी बतलाया। यथा –

आवन्त्यकः समासाच्छिष्यहितार्थ ततः स्फुटांकसमम्

वराहमिहिर ने बृहज्जातक के उपसंहारध्याय में अपने बारे में इस प्रकार कहा है –

आदित्यदासतनयस्तदवाप्तबोधः कापित्थके सवितृलब्धवरप्रसादः ।
आवन्तिको मुनिर्मतान्यवलोक्य सम्यक्, होरां वराहमिहिरो रुचिरां चकार ।।

यह श्लोक बतलाता है कि वराहमिहिर ब्राह्मण थे तथा पिता का नाम आदित्यदास था। उनके पिता ही उनके गुरु थे, जिनसे उन्होंने ज्योतिष विज्ञान सीखा। वराहमिहिर का जन्म कापित्थ गाँव में हुआ जो अवन्ति के पास है। गाँव में कापित्थ (कैथ) के वृक्ष बहुत ज्यादा उत्पन्न होते थे, अब भी हैं। इसी कारण शायद यह ग्राम कापित्थ नाम से विश्रुत हुआ।

वराहमिहिर उस समय पैदा हुए जब भारत स्वर्णिम युग में था। भारत में साहित्य, संस्कृति, दर्शन, विज्ञान, कला उस समय अपने चरमोत्कर्ष विकास में थे। ऐतिहासिक दृष्टि से विक्रमादित्य के नवरत्नों में वराहमिहिर का नाम आया है। कालिदास विरचित ज्योतिर्विदाभरण का यह श्लोक सर्वाधिक प्रसिद्ध रहा है।

धन्वन्तरिः क्षपणकामरसिंहशंकुवेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः।

ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य।।

धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वेतालभट्ट, घटखर्पर, कालिदास, विख्यात विराहमिहिर तथा वररुचि ये विक्रमादित्य की सभा के नवरत्न थे।

वराहमिहिर के मृत्युकाल के विषय में एक वाक्य प्रचलित है –

नवाधिकपंचशतसंख्यशाके वराहमिहिरचार्यो दिवंगतः।

ब्रह्मगुप्त के टीकाकार आमराज ने वराहमिहिर की मृत्यु शाके 509 में बताई है। अर्थात इनके मृत्यु का काल ईस्वी 580 आता है।

'वराहमिहिर स्मृति-ग्रन्थ' के आधार पर आचार्य वराहमिहिर का परिचय निम्न प्रकार से प्रदान किया गया है -प्राचीन मालवा की राजधानी उज्जैन से लगभग सौ मील दूर पश्चिम-दक्षिण की ओर कापित्थ नामक एक ग्राम था जिसमें तीन सौ ब्राह्मण परिवार रहा करते थे। कापित्थक उज्जैन से केवल चौदह मील दूर है जिसे वराहमिहिर की जन्मभूमि माना जाता है। उस गांव के चारों ओर आम, कटहल, जामुन, नारंगी, कैथ, इमली, नारियल, नींबू, अनार, केला आदि अनेक प्रकार के फलों एवं कई प्रकार के पुष्पों के वृक्ष थे। चूंकि उपरोक्त गांव में कैथ के वृक्षों की संख्या अधिक थी, इस कारण से उस गांव को कापित्थ कहा जाता था। ध्यान रहे कैथ को संस्कृत में 'कपित्थ' कहते हैं। इस ग्राम के एक मील दूर तक छोटी सी नदी बहती थी जिसमें हर समय पानी चलता रहता था। इस नदी पर दो सौ गज तक दोनों किनारों पर सफेद संगमरमर से निर्मित घाट बने हुए थे। आदित्यदास इस गांव के प्रमुख व्यक्ति होने के साथ-साथ एक विद्वान एवं सम्पन्न ब्राह्मण भी थे जिनकी स्थानीय लोगों के अतिरिक्त दूर-दूर के लोगों में भी बड़ी प्रतिष्ठा थी। वह इसी गांव में रहते और हर समय भजन-पाठ एवं विद्या अध्ययन में लीन रहा करते थे। पच्चीस वर्ष की आयु तक इनके यहां कोई सन्तान नहीं हुई थी। इनकी पत्नी सत्यवती (इन्दुमती) भी बहुत धार्मिक, पवित्र, उदार एवं शुभ कर्म करने वाली थी। सत्यवती को यहां हर प्रकार का भौतिक सुख प्राप्त था; किन्तु जीवन का सन्ध्या होने तक भी उनके कोई संतान न थी। एक बार वे दोनों संतान दुःख से पीड़ित होकर नदी में डूब कर प्राण त्याग करने के विचार से सायंकाल को घर से निकल पड़े। आदित्यदास स्वयं सूर्य भगवान के परम भक्त थे और वह निरन्तर सूर्य उपासना किया करते थे। नदी में स्नान करने के पश्चात् उन दोनों ने भगवान सूर्यदेव के सामने करबद्ध होकर प्रार्थना की-आप सबसे शक्तिमान एवं महान् हैं। हमने निरन्तर पच्चीस वर्ष से आपकी भक्ति की है; किन्तु अभी तक हम पुत्र सुख से वंचित हैं। वेदों में कहा गया है कि अपुत्र को गति नहीं मिलती तथा मोक्ष अथवा स्वर्ग की प्राप्ति भी नहीं होती। आप हमारे शास्त्रों के अनुसार त्रिदेवों (ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र) का स्वरूप हैं और आपकी वर देने की शक्ति भी अपार है। आप या तो अस्त होने से पूर्व ही हमें पुत्र रत्न होने का वरदान देवें या हमें अपनी शरण में ले लेवें। यह कह उन दोनों ने नदी में अपने प्राण त्यागने के उद्देश्य से गोता लगाने का निश्चय अभी किया ही था कि उन्होंने एक बूढ़े ब्राह्मण को नदी के बाहर खड़ा हुआ देखा जिसका मुख-मण्डल बहुत ही प्रकाशमान था। उस वृद्ध ब्राह्मण ने उन दोनों को पानी से बाहर आने का आदेश दिया और वे दोनों एक दम नदी से बाहर आकर उस अलौकिक आभायुक्त वृद्ध ब्राह्मण के चरणों में गिर पड़े। बूढ़े ब्राह्मण ने उन दोनों को बड़े प्रेम से उठाया और उन्हें कहने लगा कि "मैं सूर्य हूँ, आप लोग वर्षों से मेरी अर्चना कर रहे हैं। मैं आप दोनों की भक्ति से प्रसन्न हूँ तथा आपकी मनोकामना अवश्य पूर्ण होगी। अब तक आकाश में मेरा बिम्ब पश्चिम की ओर आधा अस्त हो चुका है, मैं जब तक आप लोगों को पुत्र होने का वरदान नहीं दूंगा तब तक पूर्ण रूप से मेरा बिम्ब अस्त नहीं होगा। अर्थात् मैं अस्त होने से पूर्व ही आपकी प्रतिज्ञानुसार आपको वर दूंगा।" मैं आप लोगों की भक्ति से अत्यन्त प्रसन्न हूँ; किन्तु आप लोगों के अनेक जन्मों के अशुभ कर्म इतने अधिक थे। जब तक आपकी निरन्तर भक्ति के द्वारा उन का नाश नहीं हो पाया मैं आप लोगों के समक्ष नहीं आ सका हूँ और न ही आप के पुत्र न होने के दोष को नष्ट कर सका हूँ। अब आप के यहाँ एक पुत्र होगा जिसका नाम मेरे नाम पर ही (मिहिर) होगा। वह वास्तव में ही लोगों की अन्धकार रूपी अज्ञानता को नष्ट करने वाला एवं सुसभ्य लोगों के हृदय को प्रफुल्लित करने वाला सूर्य होगा। आपके पुत्र के यहाँ भी एक ऐसा पुत्र होगा जिसका नाम पृथुयश अर्थात् पृथ्वी पर सम्मानित होने वाला व्यक्ति होगा।

आपका पुत्र मिहिर एक अद्भुत एवं अपूर्व बुद्धि का मनुष्य होगा। वह समस्त वेदों, शास्त्रों पुराणों

एवं विज्ञानों में दक्ष होगा। उसे महान् सम्राट् विक्रमादित्य का आश्रय मिलेगा वह उसका मुख्य सलाहकार भी होगा। नौ विद्वान रत्नों की सभा अर्थात् 'नवरत्नों' में से पुत्र सबसे चमत्कारी रत्न होगा। उसकी आयु दीर्घ होगी एवं वह प्रतापी होगा। आपके पुत्र की **80** वर्ष की आयु होगी, किन्तु तुम उसके जन्म के बाद बहुत समय तक जीवित नहीं रह सकोगे। जबकि तुम्हारी पत्नी अपने पुत्र की वैभव एवं कीर्ति को देख सकेगी।

"इन्दुमति! यह फल तुम ले लो और इसे कल खाली पेट दोपहर के समय अभिजित मुहूर्त में खा लेना। अगले वर्ष चैत्र शुक्ल दशमी को ठीक दोपहर के समय तुम्हारे यहाँ पर पुत्र जन्म लेगा जिसका नाम मिहिर होगा क्योंकि वह मेरे वरदान से जन्म लेगा। आदित्य, भानु रवि, सूर्य, सविता, दिवाकर, जगत्चक्षु, मार्तण्ड एवं मिहिर ये सब मेरे ही नाम हैं।" वे दोनों सूर्य भगवान के चरणों में सादर गिर पड़े और सूर्य भगवान ने जो कि बले ब्राह्मण के रूप में विराजमान थे उन दोनों को नीचे से ऊपर उठाया और उनके ऊपर उठते ही वे अलोप हो गये और एक दम अन्धेरा छा गया। आदित्यदास ने सूर्य का पूजन किया और शीघ्र ही दोनों खुशी-खुशी घर वापस लौट आये। अगले दिन इन्दुमति ने सूर्यदेव द्वारा प्रदान किये फल को उनके आदेशानुसार खा लिया। चैत्र शुक्ल दशमी को दोपहर बारह बजे इन्दुमति के यहाँ मिहिर ने जन्म लिया। मिहिर बड़ा हृष्ट-पुष्ट सुन्दर और उत्तम आकृति वाला था। गांव के सभी लोग इस प्रकार के अद्भुत बालक के जन्म पर हर्ष करने लगे। आदित्यदास ने धर्मशास्त्र के अनुसार उन सभी संस्कारों को पूरा किया जो ब्राह्मणों के लिए निर्धारित किये गये हैं।

अपने पिता आदित्यदास से शिक्षा प्राप्त करने पर मिहिर ब्राह्मणों द्वारा सीखे जाने वाली समस्त विद्याओं में प्रवीण हो गया और उसकी प्रसिद्धि न केवल अपने गांव 'कापित्थक' तक ही सीमित थी बल्कि आस-पास के सभी क्षेत्रों में भी अब मिहिर की विद्वत्ता की चर्चा होनी शुरू हो गई थी। आठ वर्ष की आयु में मिहिर के यज्ञोपवीत संस्कार के बाद आदित्यदास ने मिहिर को वेद, ज्योतिष शास्त्र एवं प्राकृतिक विज्ञान आदि की शिक्षा देकर एक विद्वान् पंडित बना दिया। बीस वर्ष की आयु होते ही मिहिर के पिता आदित्यदास का स्वर्गवास हो गया। उस समय मिहिर विशाल पैतृक सम्पति एवं ख्याति तथा विद्या से सम्पन्न था। मिहिर को वाकसिद्धि प्राप्त थी। अर्थात् उसकी भविष्यवाणी शत-प्रतिशत सत्य हुआ करती थी। उस प्रदेश के धनाढ्य लोगों एवं राज्य के उच्च अधिकारियों में मिहिर के प्रति विशेष श्रद्धा थी एवं समय-समय पर लोग मिहिर से ज्योतिष सम्बंधी परामर्श लेने आया करते थे।

यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ज्योतिर्विज्ञान में पारंगत होने के लिए सूर्यदेव की कृपा प्राप्त करनी आवश्यक है। मिहिर ने भी सूर्य भगवान को प्रसन्न करने के लिए अपने जीवन के आरम्भिक काल में कठिन तपस्या की थी। कैथ के वृक्षों से भरपूर जंगल में जाकर मिहिर ने एक वृक्ष पर झूला डाला। उसने उस पर बैठ कर तपस्या करनी शुरू कर दी। उस झूले को बारह रस्सियों से लपेटा, झूले के नीचे मिहिर ने अग्नि प्रज्वलित की। प्रत्येक मास के बाद मिहिर झूले की एक रस्सी को काटकर जला देता था, शेष एक रह गई तब मिहिर ने उसे काटकर स्वयं को अग्नि में जलाकर भस्म हो जाने का निश्चय किया। जिस समय मिहिर झूले की अन्तिम रस्सी काटकर अग्नि में बलिदान होने को तैयार था, उसी समय सूर्यदेव अपने दिव्य रूप से मिहिर के सन्मुख आकर कहने लगे-मैं तुम्हारी तपस्या और प्रार्थना से प्रसन्न हूँ। तुम जो भी वरदान चाहते हो, मांग लो। मैं सहर्ष तुम्हारी मनोकामना पूर्ण करूंगा। सूर्यदेव को अपने सन्मुख साक्षात् रूप में देखकर मिहिर झट से उनके चरणों में गिर पड़ा। प्रार्थना कर कहने लगा कि मुझे ज्योतिष के तीनों स्कन्धों (सिद्धान्त, संहिता, होरा) में पारंगत होने का आशीर्वाद प्रदान करें। 'तथास्तु'-ऐसा

कहकर सूर्यदेव वहाँ से अलोप हो गये। उसी दिन से मिहिर ज्योतिष के तीनों स्कन्धों के महाविद्वान हो गये। सूर्यदेव से वरदान का उल्लेख मिहिर ने 'बृहज्जातक' के अन्तिम अध्याय में भी किया है।

एक समय सम्राट विक्रमादित्य एवं उनके सौतेले भाई भट्टी जो विक्रमादित्य के मन्त्री भी थे, दोनों घूमते-फिरते कापित्थक गांव आ निकले और वहां पर उन्होंने परम तेजस्वी ब्राह्मण मिहिर को नदी के तट पर सन्ध्या करते हुए देखा। ये दोनों ही उस ब्राह्मण की ओर बढ़े और उसके तेज से आकर्षित होकर उसके निकट जाकर बैठ गये। विक्रमादित्य ने उस दिव्य तेज से युक्त ब्राह्मण की परीक्षा लेने के लिए अपने आप को व्यापारी तथा भट्टी को अपना मुन्शी बताकर व्यापार के लिए यात्रा में सफलता सम्बन्धी प्रश्न बड़ी श्रद्धा से पूछा। मिहिर ने थोड़ी देर ध्यान लगाकर कहा कि आप व्यापारी नहीं हैं, बल्कि आप तो एक शक्तिशाली एवं सुयोग्य और दयालु सम्राट् हैं तथा आप के साथ आपका सौतेला भाई है, जो कि सुयोग्य मंत्री है। आप के दो सौतेले भाई और भी हैं। मिहिर ने कहा कि मैंने ज्योतिष-शास्त्र के आधार पर यह रहस्य आपको बताया है जबकि आप दोनों ने कपट द्वारा मेरी परीक्षा ली है। यह उत्तर सुनकर विक्रमादित्य एवं भट्टी अवाक् रह गये और एकदम मिहिर से क्षमा मांगते हुए उनके चरणों में गिर पड़े। मिहिर ने उन्हें ऊपर उठाकर अपने गले से लगाया। उस रात्रि को वे दोनों कापित्थक गांव में ही मिहिर के निवास स्थान पर ठहरे। प्रातः होते ही विक्रमादित्य के आग्रह पर मिहिर को उज्जैन उनके साथ चलना पड़ा। विक्रम ने मिहिर को भी अपनी पण्डित सभा में महाकवि कालिदास एवं गणितज्ञ वररुचि के समान ही राजपण्डित के पद पर आसीन कर दिया। बाद में इन्हें विक्रम की नवरत्न सभा के प्रमुख होने का गौरव भी प्राप्त हुआ। विक्रम के आश्रय में रहकर ही मिहिर ने ज्योतिष सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना की।

वराह की पदवी- मिहिर की प्रसिद्धि वराहमिहिर के नाम से कैसे हुई उसका उत्तर हमें विभिन्न घटनाओं से मिलता है। एक समय महाराजा विक्रमादित्य की प्रमुख रानी के यहाँ पुत्र ने जन्म लिया। नवजात बालक की जन्म कुण्डली को देखकर कालिदास, वररुचि एवं मिहिर आदि ज्येतिषियों ने फलादेश बताए। कालिदास एवं वररुचि ने तो राजकुमार को अठारहवें वर्ष में शिकार खेलते हुए अथवा किसी जंगली पशु द्वारा मृत्यु का योग बताया। मिहिर ने कहा कि मृत्यु तो ठीक अठाहरवें वर्ष में होगी; किन्तु अमुक मास, अमुक दिन में अमुक समय जंगली सूअर द्वारा राजकुमार की हत्या होगी और उसे कोई भी किसी उपाय से नहीं बचा पायेगा। यह भविष्यवाणी सुनकर सभा में सन्नाटा छा गया। सम्राट विक्रमादित्य ने अपने मन्त्रियों एवं सभासदों को बुलाकर राजकुमार की मृत्यु की चर्चा की तथा उसके बचाव के साधन पूछे। सभी की राय लेकर विक्रमादित्य ने **80** फीट ऊँचा एक राजप्रासाद बनवाया, जिसकी सात मंजिलें थीं और जिसमें हर प्रकार के साधन मौजूद थे, तथा जिसके बाहर हर समय कड़ा पहरा रहता था।

राजकुमार को अनेक दास दासियों सहित उस राजप्रासाद में रहने का आदेश दिया गया। स्वयं विक्रमादित्य नित्य वहीं राजकुमार को देखने जाते थे। समय बीतने लगा और अठारहवाँ वर्ष भी राजकुमार को लग गया। तब मिहिर द्वारा कही हुई मृत्यु का समय भी आ गया। तब विशेष रूप से समस्त उज्जैन एवं राजदरबार में राजकुमार की मृत्यु की चर्चा हो रही थी। जंगली सूअर किस प्रकार से उस **80** फीट ऊंचे राजमहल में घुस सकेगा जिस के चारों ओर कड़ा पहरा है। सभी लोग मिहिर की भविष्यवाणी असत्य सिद्ध होने की कल्पना कर रहे थे। जब मिहिर द्वारा बताया हुआ राजकुमार की मृत्यु का समय बीत गया तब सम्राट विक्रमादित्य एवं मिहिर तथा अन्य

मन्त्री लोग राजकुमार को देखने के लिए राजप्रासाद में गये। सातवीं मंजिल तक इन लोगों को कोई भी अशुभ सूचना राजकुमार के विषय में नहीं मिली। जब लोग सातवीं मंजिल के ऊपर वाले चबूतरे पर जाने को तैयार हुए तब मिहिर ने बड़े साहस से कहा कि इस मंजिल के ऊपर वाले चबूतरे पर राजकुमार खून से लथपथ मृत पड़ा हुआ है। उसकी मृत्यु भी सूअर के द्वारा ही हुई है। मेरी भविष्यवाणी कभी भी मिथ्या नहीं हो सकती, क्योंकि यह भविष्यवाणी मुझ जैसे अल्पज्ञानी एवं साधारण व्यक्ति की नहीं बल्कि ज्योतिष विद्या के मूल स्रोत भगवान् सूर्यदेव की वाणी है जो कि ध्रुव की तरह अटल है। सूर्यनारायण की कृपा से ही मैंने बृहत्संहिता, बृहज्जातक, लघुजातक, पंचसिद्धान्तिका, यात्रापटल, विवाहपटल एवं अन्य ग्रन्थ समुच्चय आदि-आदि ग्रन्थों की रचना की है। सूर्यदेव से ही मैंने प्रवीणता प्राप्त की है। अतः मेरे द्वारा कही गई भविष्यवाणी कदापि गलत नहीं हो सकती और राजकुमार की मृत्यु निश्चिय ही हो चुकी है।

यह सुनते ही विक्रमादित्य सातवीं मंजिल के चबूतरे पर गये। वहाँ पर राजकुमार को मरा हुआ देखकर हैरान रह गये। खोज करने पर पता चला कि राजकुमार हवा खाने के लिए अभी चबूतरे पर गये थे। वहाँ पर विक्रमादित्य का राज्य ध्वज लहरा रहा था, जिसके नीचे विक्रमादित्य के राज्य चिन्ह वराह (सूअर) की एक मजबूत धातु की मूर्ति थी। राजकुमार उस वराह की मूर्ति के नीचे बने हुए चबूतरे पर ज्यों ही बैठे, त्यों ही वहां पर लगा ध्वज और धातु की मूर्ति एकदम नीचे गिर पड़ी। वराह की मूर्ति राजकुमार के ठीक सिर पर गिरने से अचानक राजकुमार की वहीं मृत्यु हो गई। विक्रमादित्य इस घटना को देखकर बड़ा दुःखी हुआ और आश्चर्य में डूब गया। विक्रमादित्य ने झट से मिहिर को उसकी सही भविष्यवाणी के लिए बधाई दी और उसे गले लगाया। विक्रमादित्य ने उस दिन से मिहिर से पूर्व अपने राज्य चिन्ह 'वराह' का नाम और जोड़ दिया। जिससे मिहिर वराहमिहिर के नाम से प्रसिद्ध हो गए।

वराहमिहिर के साहित्य में उपलब्ध पूर्ववर्ती ज्योतिष-ग्रन्थों के नाम - बृहत्संहिता, पंचसिद्धान्तिका एवं वृहज्जातक में वराहमिहिर ने अपने पूर्ववर्ती अनेक ज्योतिष ग्रन्थों के नाम दिये हैं। किरणाख्य तन्त्र, गर्ग संहिता, पराशरतन्त्र, पौराणिक मत, ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त, महेन्द्रकेतु, यात्रा नामक पुस्तक, पैतामह सिद्धान्त, रोमक सिद्धान्त, समास संहिता स्वल्प संहिता, स्मृति प्रमाण, सिद्धान्त शिरोमणि, सूर्यसिद्धान्त, स्वल्प जातक इत्यादि। वराहमिहिर के साहित्य में उपलब्ध पूर्ववर्ती ज्योतिषियों के नामोल्लेख यह बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि ज्योतिष शास्त्र के प्रति वराहमिहिर का दृष्टिकोण बहुत व्यापक था। उन्होंने अपने साहित्य में प्रसंगवश उदारतापूर्वक अनेक ज्योतिषियों का नामोल्लेख स्थान-स्थान पर किया है। इस विषय में वराहमिहिर ने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुये कहा है कि ज्योतिषशास्त्र वेदांग दृष्टादृष्ट का ज्ञापक है। इस पर कई बार इसमें मतैक्यता नहीं होती। किसी के मत का खण्डन या किसी के मत का मण्डन, अथवा अपने मन से कुछ कहना अथवा केवल अपनी बात ही कहना, हमको उचित प्रतीत नहीं होता। किन्तु हम बहुत से आचार्यों के मत को कहेंगे। कई विद्वान् इस श्लोक को प्रक्षिप्त भी मानते हैं, परन्तु यह तो सत्य है कि वराहमिहिर ने जगह-जगह पर अनेक पूर्वाचार्यों के मत को भी सब के सामने रखा है। वराहमिहिर ने शक्र, कपिल, चाणिक्य, बलदेव, बृहद्रथ, गरुत्मान, कपिस्थल, ऋषभ, भदित्त, सवित्र, लाटदेव एवं हस्ताब्द इत्यादि विद्वानों के नाम अपने साहित्य में प्रचुर मात्रा में दिये हैं। असित, अगस्त्यमुनि, अवन्ति के महाराज श्री द्रव्यवर्धन, आचार्य विष्णु चन्द्र, आचार्य, इन्द्र, ऋषिपुत्र, कश्यप, काश्यप, गर्ग, जीवशर्मा, भगवान् गर्ग, वृद्धगर्ग, भगवान् गार्ग्य, महर्षि गर्ग, गरुड, दैवलग, देवस्वामी, नन्दी, नग्नजीत, नारद, पराशर, भगवान् पराशर, पुलिशाचार्य, बृहस्पति, बादरायण, भट्टब्रह्मगुप्त, भानुभट्ट भागुरि

भारद्वाज मुनि, मय, मयासुर, मणिस्थ, माण्डव्य, यवन, यवनेश्वर, वसिष्ठ, वज्र ऋषि, वक्ष्यमाण, वरुण के पुत्र अगस्त्य, वररुचि, विष्णु गुप्त, विष्णु, विश्वकर्मा, वीरभद्र, शुक्र, समुद्र ऋषि, सत्याचार्य, सारस्वत, सिद्धसेन, सूर्य, श्रुतकीर्ति, हिरण्यगर्भ, इत्यादि अनेक विद्वानों के नामों का उल्लेख वराहमिहिर ने अपने साहित्य में बार-बार किया।

3.2.1 आचार्य वराहमिहिर द्वारा रचित ग्रन्थ

ज्योतिष जगत् में वराहमिहिर ही एक मात्र ऐसे विद्वान् हुए हैं जिनकी लेखनी ने ज्योतिष के तीनों स्कन्धों पर साहित्य का सृजन किया। प्राप्त प्रमाणों एवं जनश्रुतियों के आधार पर उन्होंने कुल आठ ग्रन्थों की रचना की, जो इस प्रकार हैं

1) **पंचसिद्धान्तिका -** भारतीय ज्योतिष-विज्ञान के इतिहास में पंचसिद्धान्तिका का विशेष महत्व है। आचार्य वराहमिहिर के द्वारा रचित इस ग्रन्थ में गणित ज्योतिष के पांच विभिन्न सिद्धान्त वराहमिहिर के काल में प्रचलित थे। बहुत समय तक इनका मूल-ग्रन्थ अप्राप्य रहा, परन्तु प्रोफेसर वूलर, जिनको बम्बई सरकार ने संस्कृत पाण्डुलिपियों की खोज का काम सुपुर्द किया था, इसकी दो प्रतियां प्राप्त करने में सफल रहे। डाक्टर थीबो और महामहोपाध्याय पंडित श्रीसुधाकर द्विवेदी ने इसे अंग्रेजी अनुवाद व संस्कृत टीका सहित सन् 1889 में प्रकाशित किया।

   यह ग्रन्थ कुल 18 अध्यायों में विभक्त है। जिसमें 1. पैतामह, 2. वासिष्ठ, 3. रोमक, 4. पोलिश और 5. सौर (सय) इन पाँच सिद्धान्तों का सारांश दिया गया है। वराहमिहिर ने यह भी निर्णय दे दिया कि इन सिद्धान्तों में क्रमशः सबसे उत्तम कौन सा है और शेष सिद्धान्तों का तत्ववेत्ताओं की दृष्टि में क्या स्थान है?

   प्रथम अध्याय के परिचय खण्ड में ही वराहमिहिर ने पूर्वाचार्यों को नमस्कार करते हुए उनके मतों का प्रतिपादन करते हुये, युगगणना हेतु सूर्यसिद्धान्त की गणना को उपयोगी माना तथा वासिष्ठसिद्धान्त की भ्रान्तियों का निरूपण करते हुए उसे अनुपयोगी बताया। 'करणावतार' और 'नक्षत्रादिच्छेद' नामक द्वितीय व तृतीय अध्याय में सूर्य एवं चन्द्रमा क्षितिज के किस अक्षांश में, कौन से नक्षत्र में स्थित होंगे इसकी गणना की गई है। ग्रहच्छाया, आकाश में विभिन्न लग्नोदयों का काल, रेखागणित द्वारा सूर्य के दूरी की परिमापन, तिथि की लम्बाई के परिमापन के साथ, पौलिशसिद्धान्त के गणित सूत्रों पर विस्तार से चर्चा की गई है। सूर्य, चन्द्र के क्षेत्रफल के विस्तार से गणना, उनके दैनिक संचार के साथ राहु की अंशात्मक गणित दी गई और बताया गया कि जब राहु अधिकतम अक्षांश पर हो तो चन्द्रमा से सदैव 90° की दूरी पर रहता है। करणाध्याय' नामक चौथे अध्याय में रेखागणित की सूक्ष्मातिसूक्ष्म जटिलताओं का निरूपण करते हुए 56 श्लोकों के माध्यम से चरखण्ड व ग्रहों के क्रान्तिसर निकालने के अमूल्य सूत्र दिये गये हैं। 'शशिदर्शन' नामक पंचम अध्याय के मात्र दस श्लोकों में सूर्य-चन्द्र के अन्तराल व क्रान्तिवृत के अन्तराल को लेकर चन्द्रोदय एवं चन्द्रास्त के सूत्रों को प्रतिपादित किया गया है। 'चन्द्रग्रहण' नामक छठे अध्याय के 14 श्लोकों में पौलस्त्यसिद्धान्त के अनुसार चन्द्रग्रहण के स्पर्श एवं मोक्ष की स्थितियों को स्पष्ट किया गया है। 'पौलिशसिद्धान्त में 'रविग्रहण' नामक सातवें अध्याय में मात्र 6 श्लोकों में राहु की छाया के लम्बन को लेकर सूर्यग्रहण की स्थितियों का मापन किया गया है।

'रोमक सिद्धान्त में रविग्रहण' नामक आठवें अध्याय में रोमक सिद्धान्त के विभिन्न सूत्रों का दिग्दर्शन कराया गया। 'सूर्य सिद्धान्त में रविग्रहण' नामक नवमे अध्याय में सूर्य सिद्धान्त के अनुसार गणित के विभिन्न सूत्र दिये हैं। प्रथम श्लोक में ही बताया है कि सूर्य सिद्धान्त के अनुसार वांछित दिन के सूर्य के भगण काल को 800 आग्रहायण से गुणा करें, 442 घटावें, और उसमें 292207 का भाग दें तो अवन्ति नगर के मध्यकालीन (दोपहर) सूर्य की आकाशीय स्थिति स्पष्ट हो जाती है। 'चन्द्रग्रहण' नामक दसवें अध्याय में सूर्यसिद्धान्त के अनुसार ग्रहण के भोगकाल को (घटि-पल-विपल में) स्पष्ट करने के सूत्र दिये हैं। 'अनुवर्णन' नामक एकादश अध्याय में सूर्यसिद्धान्त के अनुसार ग्रहणों के लागू होने के सूत्रों पर चर्चा की गई है। 'पैतामह सिद्धान्त' नामक द्वादश अध्याय में पितामह सिद्धान्त के अनुसार पांच वर्षों का एक युग माना गया है जिसमें तीस महीनों के अन्तराल से एक अधिकमास और 62 दिनों से एक चान्द्र दिवस (अमावस्या) का अन्तर माना गया है। 'शकराजा' के काल में 2 घटा कर, 5 का भाग देने से 'अहर्गण' की प्राप्ति होती है। अहर्गण की शुरूआत माघ शुक्ल के सूर्योदय से प्रारम्भ मानी गई है।

'त्रेलोक्य संस्थान' नामक त्रयोदश अध्याय में ब्रह्माण्ड के विभिन्न रहस्यों को बड़े ही सुन्दर ढंग से उद्घाटित किया गया है। 'छेद्यक यन्त्र' नामक चतुर्दश अध्याय में रेखागणित के विभिन्न कोणात्मक नियमों के अनुसार पृथ्वी की धुरी, पृथ्वी के मध्य का मान निकालने के सूत्र हैं। इस अध्याय में कच्छप यन्त्र, जल-घड़ी इत्यादि विभिन्न ज्योतिषीय वेध-यन्त्रों के निर्माण की तकनीक दी गई है। ज्योतिषोपनिषद्' नामक पंचदश अध्याय भी 'त्रैलोक्य संस्थान' अध्याय की तरह चमत्कारों से परिपूर्ण एवं महत्वपूर्ण है जिसमें वराहमिहिर की विलक्षण प्रतिभा मुखरित हुई है। 'सूर्यसिद्धान्त में मध्यगति' नामक सोलहवें अध्याय में सभी ग्रहों की मध्यगति निकालने के सूत्र दिये गये हैं। 'ताराग्रह स्फुटीकरण' नामक सत्रहवें अध्याय में विभिन्न ग्रहों की कक्षा एवं उनके भ्रमणकाल की व्याख्या की गई है। 'पौलिशसिद्धान्त में ताराग्रह' नामक अन्तिम अध्याय, इस ग्रन्थ का सबसे बड़ा अध्याय है जिसमें विभिन्न ग्रहों के उदय-अस्त काल का परिमापन किया गया है। पंचसिद्धान्तिका न होती तो गणित ज्योतिष के इतिहास का हमारा ज्ञान बहुत अधूरा अपूर्ण रह जाता। कुछ विद्वान् ऐसा भी मानते हैं कि पंचसिद्धान्तिका की रचना उस समय हुई जब वराहमिहिर यवन देश में थे। विद्वानों की यह मान्यता है कि यहीं से भारतीय ज्योतिष विदेशों में फैला।

2) **बृहत्संहिता** – बृहत्संहिता का विस्तृत वर्णन इस पाठ में किया गया है।

3) **समाससंहिता -** वराहमिहिर का समास संहिता नामक एक अन्य अप्रकाशित ग्रन्थ है। प्रसिद्ध टीकाकार उत्पल भट्ट ने ऐसा संकेत किया है। अलबेरुनी के अनुसार यह बृहत्संहिता का ही संक्षेप रूप रहा होगा। कुछ विद्वानों का मत है कि बृहज्जातक व लघुजातक की तरह ही बृहत्संहिता व समाससंहिता भी स्वतंत्र रचनायें हैं। समाससंहिता का प्रकाशन अभी कहीं से भी नहीं हुआ है, परन्तु बृहत्संहिता में अनेक जगह स्वयं वराहमिहिर ने 'समाससंहिता' का उल्लेख किया

4) **बृहद्विवाह पटल -** बृहत्संहिता के प्रथम अध्याय उपनयनाध्याय के श्लोक 10 के आधार पर इस ग्रन्थ का नामोल्लेख मिलता है। परवर्ती अनेक विद्वानों ने वराहमिहिर के इस ग्रन्थ की चर्चा की है, परन्तु यह ग्रन्थ भी अभी तक अप्रकाशित है।

5) **बृहज्जातक -** होरा-शास्त्र के जातक ग्रन्थों में बृहज्जातक का विशिष्ट स्थान है। जातक-

ग्रन्थों में इसका नाम बड़े आदर से लिया जाता है तथा इस ग्रन्थ के अनेक स्थानों से अनेक प्रकाशन हुये हैं। बहज्जातक कुल 28 अध्यायों में विभक्त है, जिनमें ग्रह-नक्षत्र, राशि, दशाओं, अन्तर्दशाओं अष्टक वर्ग इत्यादि विभिन्न विधाओं द्वारा फल कथन की विशिष्ट परम्पराएँ निर्दिष्ट हैं। आचार्य वराहमिहिर ने इस ग्रन्थ को 'राशिभेदाध्याय' से प्रारम्भ किया है। दूसरा अध्याय 'ग्रहभेदाध्याय' में ग्रहों के स्वरूप, द्रव्य, दृष्टि एवं बल पर चर्चा है। 'वियोनिजन्म' नामक तीसरे अध्याय में पशु, पक्षी एवं वृक्ष की कुण्डली पर चर्चा है। निषेकाध्याय में गर्भाधान योग ऋतु, गर्भसम्भव, मैथुन, प्रसवकाल की चर्चा है। सूतिकाध्याय नामक पांचवें अध्याय में सद्यजातक बालक के ईद-गिर्द की परिस्थितियों, नालवेष्टन, दीपज्ञान इत्यादि का वर्णन है। अरिष्टाध्याय में अरिष्टकथन है। आयुर्दायाध्याय नामक अध्याय में परम व निम्न आयु की गणना है। दशान्तर्दशाध्याय में दशाओं पर, अष्टकवर्गाध्याय में अष्टकवर्ग, कर्माजीवाध्याय में कर्मेश व धनप्राप्ति के योग दिये गये हैं। ग्रन्थ के 11, 12 व 13 अध्यायों में क्रमशः राजयोगाध्याय, नाभस्योगाध्याय, चन्द्रयोगाध्याय की विशिष्ट व्याख्याएँ दी हैं। ग्रहों की दृष्टि का वर्णन 19 वें अध्याय में निरूपित किया है। भावफलाध्याय नामक बीसवें अध्याय में लग्नादि द्वादश भावों में सूर्यादि ग्रहों की स्थितियों पर फलादेश है। आश्रयाध्याय में होरा, द्रेष्काण व त्रिंशांश पर फलादेश हैं। प्रकीर्णाध्याय नामक 22 वें अध्याय में यौवनसुख इत्यादि प्रकीर्ण विषयों को प्रतिपादित किया गया है। ग्रन्थ के अनिष्टाध्याय नामक 23वें अध्याय में अनिष्ट ग्रह के कारण व निवारण का विस्तृत विवेचन है। द्विग्रहयोगाध्याय में एक से अधिक ग्रहों की स्थितियों पर फलादेश हैं। प्रव्रज्यायोगाध्याय में सन्यास योग पर चर्चा है। ऋक्षशीलाध्याय नामक सोलहवें अध्याय में नक्षत्रगत फलादेश स्थितियों पर फलोदश है तथा ग्रहराशिशीलाध्याय में सूर्यादि अन्य ग्रहों के विभिन्न राशिगत फलादेश का विस्तृत विवेचन है।

आचार्य प्रवर ने एक ही कुण्डली पर पुरुष व स्त्री जातक के अलग-अलग फलादेश पर गम्भीरता से विचार किया है। 24 वां अध्याय स्त्रीजातकाध्याय के नाम से लिखा गया है। निर्याणाध्याय में मृत्यु की विभिन्न स्थितियों पर विचार किया गया है। नष्टजातकाध्याय का स्वतंत्र विवेचन विस्तार से ग्रन्थ के 26 वें अध्याय में दिया गया है। द्रेष्काणाध्याय नामक 27 वें अध्याय में बारहों राशियों के सभी द्रेष्काणों का भविष्यकथन है। उपसंहाराध्याय नामक अंतिम 28 वें अध्याय में ग्रन्थकार वराहमिहिर ने स्वयं का संक्षिप्त परिचय देते हुये ग्रन्थ की विषयवस्तु का परिगणन कराते हुये, ग्रन्थ रचना का प्रयोजन बतलाते हुये 'आत्मनिवेदन' किया है। इस ग्रन्थ में कुल मिलाकर 409 श्लोकों की रचना हुई है। अपने विचारों के अतिरिक्त वराहमिहिर ने अन्य पूर्वाचार्यों के मतों को भी उद्धृत करते हुये इस ग्रन्थ की शोभा में वृद्धि करते हुये उदार मनोवृत्ति का परिचय दिया है।

6) **लघुजातकम् -** नाम की समानता के कारण बृहज्जातक का लघु संस्करण है, यह उसके नाम से ही प्रतीत होता है। यह आचार्य वराहमिहिर का फलित ज्योतिष पर स्वतंत्र ग्रन्थ है। इसमें कुल 17 अध्यायों का विवेचन 177 श्लोकों में किया गया है। जातक ग्रन्थों में इसका लघु स्वरूप होने से इसका नाम लघुजातकम् है। इस ग्रन्थ के अध्याय एवं विषय बृहज्जातक से मिलते-जुलते हैं, परन्तु यह भी स्पष्ट हो जाता है कि एक ही विषय पर भिन्न-भिन्न श्लोकों के माध्यम से अलग-अलग प्रकार के फलादेश कहे गये हैं। इस ग्रन्थ का प्रारम्भ राशिबलाध्याय से किया गया है। तत्पश्चात् ग्रहबलाध्याय, ग्रहमैत्रीविचार,

ग्रहस्वरूप, आधानाध्याय, सूतिका, अरिष्टाध्याय, अरिष्टभंग, आयुर्दाय, अष्टवर्ग, प्रकीर्णाध्याय, राशिशीलाध्याय, आश्रययोगाध्याय, नाभस् योगाध्याय, स्त्रीजातक, निर्याणाध्याय और नष्टजातक नामक सत्रह छोटे अध्यायों का समावेश इस ग्रन्थ में किया गया है।

यह सम्भव है कि पहले लघुजातक की रचना की गई हो और बाद में विषय वस्तु को और अधिक स्पष्ट करने हेतु उसको बृहद् स्वरूप देकर 'बृहज्जातक' ग्रन्थ की रचना की हो। प्रारम्भिक अध्ययन की दृष्टि से विद्वान् लेखक ने इस ग्रन्थ की रचना की हो यह भी सम्भव है। इस लघु ग्रन्थ को हृदयंगम करने से कोई भी मनुष्य ज्योतिष शास्त्र का सिद्धहस्त विद्वान् बनने में समर्थ हो सकता है।

7) **दैवज्ञ वल्लभा** – वराहमिहिर के प्रसिद्ध फलित ग्रन्थों में इसका उल्लेख नहीं है। सन् 1975 में एक पाण्डुलिपि डॉ. शुकदेव चतुर्वेदी ज्योतिषाचार्य को प्राप्त हुई जिसमें वराहमिहिर के नाम का उल्लेख मिलता है। कुल 15 अध्यायों में विभक्त यह ग्रन्थ 248 श्लोकों का छोटा सा ग्रन्थ है, प्रकाशित है तथा उपलब्ध है। प्रश्न जातक पर यह एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसमें कार्यसिद्धि, लाभ-हानि, विवाह-प्रेम, चोरी गई या गुम वस्तु की प्राप्ति, पुत्र व कन्या जन्म का ज्ञान, गमनागमन इत्यादि महत्वपूर्ण विषयों का समाधान प्रश्न ज्योतिष के माध्यम से किया गया है। 'प्रश्नावतार' नामक प्रथम अध्याय में ग्रहों की अवस्था, प्रश्नकर्ता के स्थान व फल पर चर्चा है। शुभाशुभाध्याय, लाभाऽलाभाध्याय, सामान्य गमाऽऽगमाध्याय, शत्रुगमाऽऽगमाध्याय, प्रवास चिन्ताध्याय, जयपराजयाध्याय, रोगशुभाध्याय, नष्टलाभाऽलाभाध्याय, मनोमुष्टिचिन्ताध्याय, वृष्टिनिर्णयाध्याय, विवाहविचाराध्याय, स्त्रीपुंजन्माध्याय, प्रकीर्णाध्याय, लग्नचिन्ताध्याय, इत्यादि विषयों का इस ग्रन्थ में क्रमानुसार विवेचन है। आचार्य वराहमिहिर के परवर्ती विद्वान् पृथुयश, भट्टोत्पल, नीलकण्ठ दैवज्ञ, सिद्धनारायण एवं रुद्रमणि प्रभृति विद्वानों ने इस ग्रन्थ की परम्परा को आगे बढ़ाते हुये प्रश्न-विद्या पर स्वकीय ग्रन्थों की रचना की एवं ज्ञान की इस श्रृंखला को आगे बढ़ाया। प्रस्तुत ग्रन्थ रंजन पब्लिकेशन्स दिल्ली से सन् 1983 में प्रकाशित हुआ।

8) **लग्न-वाराही** – यह लघु पुस्तिका पांच छोटे अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में पुरुष जातक के लग्न को लेकर फलादेश दिया गया है। दूसरे अध्याय में स्त्री जातक को लेकर 12 श्लोकों में फलादेश दिया गया है। तीसरे में योग, चौथे में प्रश्न विचार तथा पांचवां प्रकरण गर्भिणी प्रश्न विचार पर है। इस अति लघु पुस्तिका में कुल 49 श्लोक हैं। यह प्रकाशित है, और टीका सहित उपलब्ध है।

9) **योग-यात्रा** – वराहमिहिरकृत 'योगयात्रा' नामक ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित है। वराहमिहिर ने अपने साहित्य में अनेक जगह यात्रा ग्रन्थ का उल्लेख किया है। बम्बई विश्वविद्यालय से पं. वसन्त कुमार ने वराहमिहिर के तीन यात्रा ग्रन्थों पर सन् 1952 में आलोचनात्मक शोध-कार्य किया। यह ग्रन्थ भी अब तक अप्रकाशित है। देवर्षि नारद के अनुसार मंगल किसी भी नक्षत्र के उत्तर भाग से गमन करे तो शुभ तथा दक्षिण भाग से गमन करे तो अशुभ फलदायक होता है। इस प्रकार से ।। भौमाचार नारद संहिता में मिलता है जबकि वराहमिहिर ने 13 श्लोकों के साथ गर्ग, को उद्धृत करते हुये भौमाचार का वर्णन विस्तार से किया है।

3.3 बृहत्संहिता ग्रन्थ का परिचय

संहिता ग्रन्थों की श्रृंखला में यह सबसे बड़ा प्रामाणिक व सर्वाधिक प्रचलित ग्रन्थ है। यह वराहमिहिर की सबसे प्रौढ़ व अंतिम रचना मानी जाती है, क्योंकि इसमें अपनी पूर्ववर्ती अनेक रचनाओं का जगह-जगह पर उल्लेख किया है। यह गम अध्यायों में विभक्त है। यह ग्रन्थ समग्र भारतीय ज्योतिष-शास्त्र का कीर्तिस्तान कुल 2793 श्लोकों के माध्यम से विद्वान् लेखक ने अपने ज्ञान को मुखरित किया सबसे छोटा अध्याय 'मरकत लक्षणाध्याय' केवल एक श्लोक का है तथा सबसे बड़ा 'वास्तुविद्याध्याय' 125 श्लोकों का है।

वराहमिहिराचार्य ने भारत के ज्योतिष ज्ञान को केवल ग्रह-नक्षत्र तक ही सीमित नहीं रखा. अपितु मानव-जीवन के विभिन्न पहलुओं पर विशद चर्चा की है। बहत्संहिता 32 व 33 वें अध्याय में दिग्दाह, भूकम्प एवं उल्कापात के विशेष लक्षण एवं फलादेश दिये गये हैं। आकाशीय चमत्कारों, इन्द्रधनुष पर 35 व 43 वें अध्याय में ज्ञान है। स्त्री-पुरुष के सामुद्रिक लक्षणों के साथ 'अंग-विद्या' पर एक अलग (44 वां) अध्याय है। न केवल स्त्री-पुरुष वरन् गौ, अश्व, हस्ति, कूर्म, कुक्कट, छाग व श्वान की चेष्टाओं पर 14 अध्याय अलग से लिखे गये हैं। इसी प्रकार खञ्जन-पक्षी, मयूर-चेष्टा एवं काकचेष्टाओं पर स्वतंत्र अध्याय हैं। इस ग्रन्थ के 80 वें अध्याय से 83 वें अध्याय में विभिन्न रत्नों की परीक्षाएँ व पहचान दी गई है। इस ग्रन्थ के 'उदकार्गलाध्याय' (अध्याय-54) एवं अध्याय 55 के 'वृक्षायुर्वेदाध्याय' के कारण वनस्पति-शास्त्र के उद्भट ज्ञाता एवं जलविज्ञान के आचार्य के रूप में समग्र विश्व में याद किये जाते हैं। बृहत्संहिता के 86 वें अध्याय के 80 श्लोकों में 'शकुनाध्याय' पर विशद् चर्चा है। इस प्रकार अपने नाम को सार्थक करता हुआ यह विलक्षण ग्रन्थ सभी विषयों को समेटे हुये है।

बृहत्संहिता ज्योतिष जगत् का सर्वाधिक प्रख्यात ग्रन्थ है। डॉ. केर्न ने मूल मात्र बृहत्संहिता छपाई है और उसका अंग्रेजी में अनुवाद करके उसे रायल एशियाटिक सोसायटी की पांचवीं पुस्तक में छपाया है। कलकत्ता में बिब्लिओथिक्स इण्डिका में बृहत्संहिता मूल मात्र छपी है। रत्नगिरि के जगन्मित्र छापाखाने में बृहत्संहिता का मूल और उसका मराठी अनुवाद छपा है। भट्टोत्पल ने बृहत्संहिता पर विस्तृत टीका लिखी है। भट्टोत्पल की प्रबुद्ध टीका ने बृहत्संहिता को सारे विश्व में प्रसिद्ध कर दिया। सुप्रसिद्ध विदेशी ज्योतिषी अलबेरुनी ने बृहत्संहिता का उस समय अरबी में अनुवाद किया था। फलतः उस काल में वराहमिहिर की ज्योतिष विद्या का प्रचार-प्रसार अरब व यूनान के सुदूर प्रदेशों में होने लग गया था। वराहमिहिर की इस रचना को विद्वानों ने 'पुस्तक पंचक' में प्रमुख स्थान दिया है। ज्योतिष जगत में पुस्तक पंचक के महान् ग्रन्थों में 1. पाराशर होराशास्त्र, 2. बृहत्संहिता, 3. सारावली, 4. जातक पारिजात, 5. होरासार की गणना की गई है।

3.3.1 बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित विषय

अनुक्रमणिका की दृष्टि से बृहत्संहिता में सबसे पहले शास्त्रोपनयन, बाद में सांवत्सरसूत्र, अर्कचार, चन्द्रचार, राहुचार, भौमचार, बुधचार, गुरुचार, शुक्रचार, शनिचार, केतुचार, अगस्त्यचार, सप्तर्षिचार, कूर्मविभाग, नक्षत्रव्यूह, ग्रहभक्तियोग, ग्रहयुद्ध, शशिग्रहसमागम, ग्रहवर्षफल, ग्रहशृंगाटक, मेघों के गर्भ लक्षण, गर्भधारण, प्रवर्षण, रोहिणीयोग, स्वातियोग, आषाढ़ीयोग, वातचक्र, सद्योवर्षण, कुसुमलता, सन्ध्यालक्षण, दिग्दाहलक्षण, भूकम्पलक्षण, उल्कालक्षण, परिवेषलक्षण, इन्द्रायुधलक्षण, गन्धर्वनगरलक्षण, प्रतिसूर्यलक्षण, निर्घातलक्षण,

सस्यजातक, द्रव्यनिश्चय, अर्घकाण्ड, इन्द्रध्वजसम्वत्, नीराजनविधि, खञ्जनलक्षण, उत्पातलक्षण, मयूरचित्रक, पुष्यस्नान, पट्टलक्षण, खड्गलक्षण, वास्तुविद्या, उदकार्गल, वृक्षायुर्वेद, प्रासादलक्षण, वज्रलेप, प्रतिमालक्षण, वनप्रवेश, सुरभवनप्रतिष्ठा, गोलक्षण, श्वानलक्षण, कुक्कुटलक्षण, छागलक्षण, पुरुषलक्षण, पचलना पंचमहापुरुषलक्षण, स्त्रीलक्षण, वस्त्रच्छेदनलक्षण, चामरलक्षण, दण्डपरीक्षा. स्त्रीप्रशंसा, सौभाग्यकरण कान्दर्पिक, गन्धयुक्ति, पुंस्त्रीसमागम, शयनविधि, रत्नपरीक्षा, मुक्तालक्षण, पद्मरागपरान दीपलक्षण, दन्तकाष्ठलक्षण, शाकुनमिश्रफल, अन्तर्चक्र विरुत. श्वचक्र, शिवारुत, मृगवा अश्वचेष्टा, हस्तिचेष्टा, वायसविद्या यहाँ पर शिवारुताध्याय के अन्तर्गत स्वचीष्टत गोचेष्टिताध्याय के अन्तर्गत उष्ट्री, व्याघ्री, सिंही आदि प्रधान सब जीवों का लक्षण कहा है। तत्पश्चात् मृग-जातियों के मध्य में मार्जार, व्याघ्र, शूकर, ऊँट आदि जीवों के शृगाल की तरह लक्षण कहा गया है। पाकाध्याय, नक्षत्रगुण, तिथिगुण, करणगुण, नक्षत्रजातक, ग्रहगोचराध्याय, नक्षत्रपुरुष, रूपसत्र ये अध्याय इस ग्रन्थ के अन्तर्गत हैं। उपरोक्त क्रम से एक सौ अध्याय बनाये गये हैं। वातचक्र, अंगविद्या, पिटकलक्षण, अश्वलक्षण, गजलक्षण, ये पांच अध्याय इस प्रमाण से अलग हैं। इन अध्यायों की पद्यसंख्या मिला कर कुल चार हजार श्लोक होते हैं।

3.3.2 बृहत्संहिता ग्रन्थ का वैशिष्ट्य

बृहत्संहिता में अनेकानेक विषयों का वर्णन किया गया है, कुछ विषयों का यहां निदर्शन किया जा रहा है -

खगोल-विज्ञान - वराहमिहिर ने अपने सभी गणितीय सूत्रों को वेध के द्वारा सिद्ध किया। वे सूर्य का प्रतिदिन वेध करने में विश्वास रखते थे। सूर्यमण्डल प्रतिसूर्य एवं सूर्य के उदयकालीन वर्ग व रश्मियों को देखकर भी वराहमिहिर ने फलादेश के सूत्र प्रतिस्थापित किये। चन्द्र चाराध्याय में वराहमिहिर कहते हैं कि जिस तरह धूप में स्थित घड़े का सूर्य की तरह अधो भाग अपनी छाया से ही कृष्ण देखने में आता है उसी तरह सदा सूर्य के अधोभाग में स्थित चन्द्र का सूर्य की तरफ का आधा भाग शुक्ल और विरुद्ध दिशा में स्थित अर्धभाग अपनी छाया से ही कृष्ण होता है। जिस तरह दर्पण पर गिरे हुये सूर्य की किरणों के प्रतिबिम्ब से घर के अन्दर का अन्धकार नष्ट होता है, उसी प्रकार जलपिण्डात्मक चन्द्र के ऊपर गिरी हुई सूर्य की किरणों के प्रतिबिम्ब से रात्रि का अन्धकार नष्ट होता है

वराहमिहिर ने मंगल चार को पाँच भागों में विभाजित करते हुये मंगल को पाँच मुख वाला कहा है, (1) उष्णमुख (2) अश्रुमुख (3) व्यालमुख (4) रुधिरानन (5) असिमुसल। बुध ग्रह के बारे में वराहमिहिर कहते हैं कि जब भी बुध उदय होगा जल, अग्नि, वात् में उत्पात अवश्य होगा। अनाज में क्षय या वृद्धि अवश्य होगी अर्थात् महंगा या सस्ता अवश्य होगा।

उत्पातरहित होकर किसी समय में कभी भी बुध का उदय नहीं होता। नक्षत्रवश बुध के चार को लेकर वराहमिहिर ने बुध की सात गतियों का उल्लेख किया।

वराहमिहिर के अनुसार जिस नक्षत्र में बृहस्पति उदय होता है उस नक्षत्र के अनुसार द्वादश मास की तरह द्वादश वर्ष होते हैं।

'शुक्रचाराध्याय' में वराहमिहिर ने शुक्र के नव वीथि, तीन मार्ग और छः मण्डल बताये हैं। अश्विनी आदि तीन-तीन नक्षत्रों में क्रम से नाग, गज, ऐरावत, वृष, गो, जरद्व मृग, अज, दहन ये नव वीथियां होती हैं।

शनिश्चर के वर्ण (रंग) को लेकर भविष्यवाणी भी की गई है। यदि शनिश्चर का रंग अनेक वर्गों के मिश्रण जैसा दिखाई दे तो पक्षियों का नाश, पीला हो तो दुर्भिक्ष, रक्त वर्ण का शनिश्चर युद्ध का भय देता है और भस्म के समान हल्का श्याम हो तो प्रजाओं में द्वेष-द्रोह उत्पन्न कराता है।

'राहुचाराध्याय' के प्रारम्भ में ही वराहमिहिर प्रश्न करते हैं कि यदि राहु ग्रह है, तो आकाश में दिखाई क्यों नहीं देता? और स्वयं ही समाधान करते हैं। राहु का कोई आकार नहीं, यह केवल अन्धकारमय है। काला होने के कारण ब्रह्माजी के वरप्रदान से पर्वकाल से भिन्न समय में राहु आकाश में चन्द्र और रविमण्डल के सदृश नहीं दिखाई देता।

बृहत्संहिता का राहुचाराध्याय नामक यह पांचवां अध्याय सर्वाधिक रोचक एवं विस्तृत है जिसमें 98 श्लोकों के माध्यम से वराहमिहिर ने ग्रहण के विभिन्न रहस्यमय फलादेशों को उद्घाटित किया है। प्रत्येक देश में सूर्यग्रहण विभिन्न रूप से क्यों दिखाई देता है, इस रहस्य को स्पष्ट करते हुए वराहमिहिर कहते हैं-'सब देशों में प्रायः चन्द्रग्रहण एक रूप का और रविग्रहण विभिन्न रूप का देखने में आता है। उसका कारण यह है कि मेघ की तरह अधः स्थित चन्द्रमा पश्चिम तरफ से आकर रविबिम्ब को ढकता है। इसलिये प्रत्येक देश में सूर्यग्रहण विभिन्न रूप का देखने में आता है।

धूमकेतुओं के विषय में वराहमिहिर का वर्गीकरण अपने आप में एक विश्व का अद्वितीय संकलन है। वराहमिहिर ने केतुओं के 899 वर्गीकरण बतलाये। वराहमिहिर कहते हैं कि गणित के द्वारा प्रत्येक देश में अगस्त्य का दर्शन जानकर पण्डितों को कहना चाहिये।

अगस्त्यदर्शन सिंह राशि के तेईस अंश पर जब स्पष्ट सूर्य हो जाता है, तब होता है। वराहमिहिर ने दिशा क्रम से सप्तर्षियों के नाम इस प्रकार से कहे हैं-1. पूर्व दिशा में भगवान् मरीचि, 2. उनसे पश्चिम में वसिष्ठ, 3. वसिष्ठ से पश्चिम में अंगिरा, 4. अंगिरा के बाद अत्रि, 5. अत्रि के समीप पुलस्त्य, 6. इनके बाद पुलह, 7. पुलह के बाद क्रतु, इस तरह पूर्व दिशा से लेकर क्रम से सप्तर्षियों की स्थिति है। इनके मध्य में अरुन्धती वसिष्ठ के आश्रित हैं।

वराहमिहिर ने चार प्रकार के ग्रह-युद्ध कहे हैं, 1. भेदयुद्ध, 2. उल्लेख युद्ध, 3. अंशुमर्दन युद्ध, 4. अपसव्य युद्ध। पराजित ग्रहों के लक्षण-दक्षिण दिशा में स्थित रूक्ष, कम्पायमान, दूसरे ग्रहों के पास नहीं जाकर लौटने वाला, सूक्ष्म बिम्ब वाला, अन्य ग्रह से आक्रान्त, विकारयुक्त, किरण रहित, विवर्ष इन लक्षणों से युत ग्रह पराजित होते हैं।

चन्द्रमा के साथ ग्रह या नक्षत्रों के रहने को ग्रह 'समागम' कहते हैं। सूर्य के साथ रहने वाले ग्रह को 'अस्त' और भौमिक ग्रहों के परस्पर संयोग को 'युद्ध' कहते हैं। यह समागम जिन नक्षत्रों का शर चन्द्र शर से अल्प या तुल्य है, उन्हीं का होता है। वराहमिहिर के ग्रन्थों में ज्योतिष का ज्ञान एकाएक अत्यन्त उच्च स्थिति में पहुँचा हुआ दिखलाई देता है। ईसा पूर्व सैकड़ों वर्षों के उस काल में जब दुर्विक्ष यन्त्र का आविष्कार नहीं हुआ, आज के वैज्ञानिक आंकड़ों के अनुसार उस समय कागज का भी अविष्कार नहीं हुआ था, ऐसे अति प्राचीन काल में वराहमिहिर ने कैसे ग्रहों का वेध किया, उनकी गतियां कैसे स्थापित की, ग्रहणों के मोक्ष व स्पर्श काल का समय कैसे ज्ञात किया? भारत एवं विदेशों में स्थित प्रसिद्ध शहरों के रेखांश-अक्षांश व मध्यमान की कैसे खोज निकाली? बड़ा भारी आश्चर्य होता है।

प्राकृतिक घटनाएं - प्राकृतिक घटनाओं के बारे में वराहमिहिर का ज्ञान विलक्षण था। दिग्दाह के बारे में आचार्य कहते हैं-दिग्दाह अपनी अत्यधिक कान्ति से प्रकाशित होता है और सूर्य की

तरह दृश्यमान द्रव्य की छाया को भी प्रकाशित करता है। वराहमिहिर ने भूकम्प को चार श्रेणियों में बांटा, यथा 1. वायव्यकम्प, 2. आग्नेयकम्प, इन्द्रमण्डल, 4. वरुणमण्डल । प्रत्येक मण्डल सात-सात नक्षत्रों के क्रम से विभाजित हैं।

वराहमिहिर ने (1) धिष्ण्या (2) उल्का (3) अशनि (4) बिजली (5) तारा इन पाँच भेदों में उल्का को विभाजित किया। उल्का 15 दिन में, धिष्ण्या 15 दिन में, अशनि तीन पक्ष (पैंतालिस दिन) में, बिजली छः दिन में, इसी तरह तारा छः दिन में फल देती है।

इन्द्रधनुष के विषय में वराहमिहिर कहते हैं कि यदि रात्रि के समय पूर्व दिशा में इन्द्रधनुष दिखाई दे तो राजा को पीड़ित करता है तथा दक्षिण दिशा में दिखाई दे तो सेनापति, पश्चिम में प्रधान पुरुष और उत्तर में इन्द्रधनुष दिखाई दे तो मन्त्री का नाश करता है।

उत्पात वर्णन - उत्पातों की व्याख्या करते हुये वराहमिहिर कहते हैं कि देवमूर्ति या देवस्थानों का बिना कारण फटना, अचानक उल्कापात, दिग्दाह, भयंकर वायु या धूलि संघात, यात्रा के समय गाड़ी का उलटना, बिना बादल के बरसात, विकारयुत वायु के साथ वृष्टि, बिना अग्नि की ज्वाला, रात्रि को इन्द्रधनुष दिखाई देना, सन्ध्या में विकार, वन में रहने वाले पशुओं का गांव में आना, अचानक वृक्ष की शाख टूट कर गिर जाना, एक जाति के पशु का दूसरी जाति के पशु के साथ मैथुन करना, आकाश में तुरही का बजना, ऋतुओं के विपरीत लक्षण दिखाई देना तथा प्रकृति के विरुद्ध अनहोनी घटनाओं के घटित होने को उत्पात कहते हैं। हवन की अग्नि से भविष्य कथन करते समय हवन की अग्नि में मेघ, हाथी चिंघाड़ने या नगाड़े की आवाज सुनाई दे अथवा यज्ञ करते समय मंगलकारी ध्वनि सुनाई दे तो यजमान को उत्तम हाथी (श्रेष्ठ वाहन) की प्राप्ति होती है। हवन की अग्नि की लपटों से यदि पताका, घड़ा, घोड़ा या हाथी की आकृति बनती दिखाई दे तो यजमान उत्तम पृथ्वी का स्वामी होता है।

सामुद्रिक शास्त्र - वराहमिहिर ने सामुद्रिक शास्त्र के स्वरूप के 13 मापदण्ड स्थापित किये हैं। यथा - 1. उन्मान (शरीर की अंगुलात्मक ऊंचाई), 2. मान (शरीर का वजन), 3. गति (चाल), 4. संहति (शारीरिक अंगों की सघनता), 5. सार (मेद, मज्जा, हड्डी, चर्म वगैरह), 6. वर्ण (शरीर का रंग), 7. स्नेह (त्वचा की चिकनाई), 8. स्वर (कण्ठ से निकलने वाली ध्वनि), 9. प्रकृति (स्वभाव), 10. सत्व (मनुष्य के मानसिक गुण), 11. अनूक (पूर्व जन्म की कल्पना), 12. क्षेत्र (शरीर के विभिन्न अवयव), 13. मृजा (शरीर की कान्ति या छाया)। इस सभी के द्वारा फल कथन का वर्णन किया है।

अग्निविद्या - वराहमिहिर अग्निविद्या के ज्ञाता थे। वराहमिहिर कहते हैं कि अग्नि में डाले गये अभिलषित द्रव्यों के समान ही सुगन्ध प्रकट करने वाली, घनी और लपटदार अग्नि शुभ होती है तथा इससे भिन्न अशुभ।

पुत्र प्राप्ति करने की विधि पर विवेचना - वराहमिहिर की मान्यता है कि ऋतुकाल के पश्चात् सम रात्रियों (2, 4, 6, 8, 10, 12, 14) में पुरुष और विषम रात्रियों (1, 3, 5, 7, 9, 11, 13, 15) में कन्या सन्तति उत्पन्न होती है। यदि सम्भोग काल की सम रात्रियां दूर स्थित (यथा, षष्ठी, अष्टमी, दसवीं) इत्यादि हों तो सुन्दर, सुखी एवं दीर्घायु वाले पुत्र की प्राप्ति होती है।

दन्तकाष्ठ बनाने की विधि की विवेचना - वराहमिहिर कहते हैं कि सिद्ध किये हुये दन्त काष्ठ का सेवन करने से पुरुष प्रसन्न वदन, उत्तम मुख की कान्ति वाला, शुद्ध मुख और सुगन्धि युत देह वाला होकर अन्य जनों के लिये कानों को, सुख देने वाली उत्तम वाणी को कहता है।

केश काले करने के प्रयोग की विवेचना - बृहत्संहिता के 76वें अध्याय के प्रारम्भ में ही वराहमिहिर कहते हैं कि श्वेत केश वाले पुरुष को माला, सुगन्ध द्रव्य, धूप, वस्त्र, भूषण आदि शोभा नहीं देते। इसलिये अंजन और भूषण के सेवन की तरह केश काले करने का प्रयत्न भी करना चाहिये।

सिर स्नान की विधि की विवेचना - वराहमिहिर ने सोलह प्रकार के काष्ठ से 'कच्छपुट' ग्रन्थ का निर्माण करते हुये कहा कि इस कच्छपुट में से श्रीवास और सर्जरस (टाल) निकाल कर नेत्रबाला और दालचीनी मिला देने से यह चूर्ण अनेक प्रकार के सुगन्ध स्नान करने योग्य बन जायेगा।

सुगन्धित तेल बनाने की विधि की विवेचना - रस सिद्ध वैद्य होने के कारण वराहमिहिर ने सुगन्धित तेल बनाने की अनेक विधियों का भी उल्लेख बृहत्संहिता में किया है। यथा - मजीठ, समुद्रफेन, सुक्ति, दालचीनी, कूठ, बोल, इन सबको बराबर लेकर इनका चूर्ण बनाये। फिर उस चूर्ण को तिल के तेल में डालकर धूप में तपाये तो सुगन्धित तेल बन जायेगा और इसमें चम्पे के फूलों की गन्ध आयेगी।

ताम्बूल के गुण एवं सेवन की विधि की विवेचना - पान के गुण, पान खाने के नियम और उसके विविध प्रकार के लाभ-हानि का संकेत वराहमिहिर ने बहुत ही उत्तम प्रकार से बृहत्संहिता में दिया है।

वास्तुशास्त्र संबंधित भी चार अध्याय बृहत्संहिता में समाहित किये हैं

ऋतु-विज्ञान - ऋतु-विज्ञान के क्षेत्र में अनेक विषयों का वर्णन किया गया है - ग्रहस्थिति-वश-वृष्टिज्ञान, आकाश लक्षण, पशु-पक्षियों की चेष्टा से वर्षा का संकेत, वर्षा विज्ञान का विवेचन, मेघ लक्षण व परीक्षा मेघ लक्षण, वायु लक्षण वायु का प्रवाह, पताका एवं वायु परीक्षण का विवेचन, रोहिणी शकटयोग की आकाशीय स्थिति, स्वाति नक्षत्र के आधार पर वर्ष का शुभाशुभ कथन, अगस्त्योदय से वर्षा का सम्बन्ध।

रत्न-विज्ञान –

वराहमिहिर ने रत्नों की उत्पत्ति के विषय में पूर्वप्रचलित तीन मतों का उल्लेख किया है। रत्नों के विविध भेदों का भी निम्न प्रकार से वर्णन किया गया है -

अ) **दिव्य-रत्न-** दिव्य रत्न देवताओं द्वारा की गई तपस्या के बल से किसी सिद्धि से अलौकिक शक्ति स्वरूप में प्राप्त होते हैं। महाभारत व पौराणिक कथाओं में स्यमन्तक मणि, कौस्तुभ मणि आदि अनेक दिव्य-मणियों के प्रसंग मिलते हैं।10 यह विश्वास भी है कि स्वाति नक्षत्र में बरसे पानी की बूंदें सीपियों में पड़कर मोती बन जाती हैं। बरसते पानी की एक बूंद हवा में सूख कर मोती बन जाती है। इसे चिन्तामणि मोती कहते हैं।।। वराहमिहिर की मान्यता है कि कुछ दिव्य मणियां या मोती वर्षाकालिक उपल (पत्थर) के समान आकाश से बरसते हैं: परन्तु उन गिरते हुए मोतियों को आकाश में स्थित देवयोनियों द्वारा ऊपर ही ऊपर हरण कर लिया जाता है।

ब) **प्राणिज-रत्न-** प्राणिज रत्नों के अन्तर्गत उन रत्नों की गणना की जाती है, जो किसी प्राणी-जीव-जन्तु के शरीर से उत्पन्न होते हैं। इस कोटि में मूंगा, मोती, सीप, शंख, सर्पमणि, गजमुक्ता, मत्स्य-मुक्ता, सूकर-दन्त इत्यादि रत्न प्राणिज-रत्न कहलाते हैं।

स) **खनिज-रत्न-** भूगर्भ, खान-खदानों से प्राप्त अति मोहक, आकर्षक व चमकीले रंग-बिरगें रश्मियों वाले प्रस्तर-खण्ड इसी श्रेणी में आते हैं। माणिक, पुखराज, पन्ना, नीलम, हीरा, गोमेद, लहसुनिया, इसी श्रेणी में आते हैं।

द) **वानस्पतिक-** इस श्रेणी के अन्तर्गत वे रत्न आते हैं, जो वनस्पति विशेष से उत्पन्न होते हैं। तृणमणि, वंशलोचन, वंशमणि, वंशमुक्ता, इत्यादि इसी श्रेणी के ही रत्न कहे गये हैं।

भूगोल-विद्या के विषय - पृथ्वी की उत्पत्ति, आकार और आधार, ब्रह्माण्ड, तारे, ग्रह, उपग्रह, उल्का, नीहारिका, सौरमण्डल की उत्पत्ति, पृथ्वी का सौरमण्डल से सम्बन्ध, पृथ्वी का वर्गीकरण, मैदान, पर्वत, पठार, तटरेखा, झील, समुद्र, ज्वार-भाटा, वायुमण्डल, जलवायु के अनुसार पृथ्वी का विभाग जलमण्डल, द्वीप, भूमध्य रेखा इत्यादि।

वनस्पति-शास्त्र - बृहत्संहिता के अध्याय 54 दकार्गलाध्याय में वराहमिहिर ने 86 वृक्षों का वर्णन किया है तथा अध्याय 55 के वृक्षायुर्वेदाध्याय में 50 प्रकार के वृक्षों का वर्णन किया है। इस प्रकार से कुल 136 प्रकार के वृक्षों का वर्णन बृहत्संहिता में हुआ है जिनके नाम इस प्रकार हैं -

वेदयजनूँ, जामुन, जम्बूवृक्ष, गूलर, अर्जुन, सिन्दुवार, निर्गुण्डी, बेर, पलाश (ढ़ाक), बेल, फल्गु (काकोदुम्बरिका), कपिल (कम्पिल्ल), शोणाक (सरिवन), कुमुदा, बहेडा, सप्तपूर्ण, कन्जक (करंजक), महुए, तालमखाना (तिलक), कदम्ब, ताड़ (ताल), कपित्थ (कैथ), अश्यंतक, हरिद्र, वीरण (गाँडर), दूब, भंगरैया, निसोत, इन्द्रदन्ती, दंतिया (जयपाल), सूकरपादी, लक्ष्मणा, आक्रातक (अम्बाडा), वरुणक (बरण), भिरवा, बेल, तन्दु (तेन्दुआ), अंकोल, पिण्डार, शिरीष, परुषक (फालसा), अशोक अतिवला, नीम्ब, व्रजदन्ती, कटेरी, खजूर, कर्णिकार, पीलु, करीर, रोहितक, धत्तूरा, लाल करन्ज, कुश, शमी, श्वेत, कण्टक, स्निग्ध, बड़, पीपल, अश्वकर्ण (संखुआ), सर्ज, श्रीपर्णी, अरिष्ट, धव, शीशम, तेन्दु मोक्षक (काली पाठरि), अपामार्ग, गिलोय, तिलु, आक, नागरखेल, कदली, निचुल, नीप, आम, पिलखन, बकुल, कुखक, तार, मौलसरी, अगन्जन, मोथा, रवस, राजकोशातक, आँवला, कतक, पुन्नाग, प्रियंगु (ककुनी), शिरीष, कटहर, बडहर, वसा, सूर्यमुखी, निसोत, अतिमुश्कक, अंकोल, श्लेष्मातक, लसोडा, वच, अरलू।

जल-विज्ञान के विषय - वृक्षों से धन प्राप्ति का परिज्ञान, कलमी वृक्ष लगाने का विधान, एक दिन में फलयुक्त पौधा लगाना, वृक्षों में रोगोत्पत्ति के कारण व उनकी चिकित्सा, वल्मीक से जल की स्थिति, दो वृक्षों के संयोग से जल की स्थिति, केवल भूमि लक्षण से जल परिज्ञान, कूप खोदने के मुहूर्त, भूतल के वृक्षों से जल की स्थिति, फल-पुष्पों से जल की स्थिति, धान्य से जल की स्थिति, वाष्प और धूम से जल ज्ञान, जल शुद्धि का विधान

शकुनों का वर्णन –

वराहमिहिर ने शकुनों के दस भेद निम्न प्रकार से बताए हैं-

1. क्षण दीप्त- काल, मुहूर्त व क्षण विशेष में दृष्ट शकुन क्षणदीप्त कहलाते हैं।
2. तिथि दीप्त- तिथियों (चतुर्थी, अष्टमी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, और चतुर्दशी) में दृष्ट शकुन तिथिदीप्त कहलाते हैं।
3. नक्षत्र दीप्त- नक्षत्रों (मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वात्रय, भरणी, और मघा) में दृष्ट शकुन नक्षत्र दीप्त कहलाते हैं।

4. वायु दीप्त- वात (भयंकर, खर, कठोर और प्रतिलोम वायु) में दृष्ट शकुन वायुदीप्त कहलाते हैं।
5. सूर्य दीप्त- सूर्याभिमुख स्थित शकुन सूर्यदीप्त कहलाते हैं। उपरोक्त पांच वर्गीकरण 'देवदीप्त' कहलाते हैं तथा उत्तरोत्तर बली होते हैं।

   इसके अतिरिक्त पांच 'क्रियादीप्त' शकुन कहलाते हैं जो इस प्रकार हैं -
6. गति दीप्त- शकुन की गति से उत्पन्न शुभाशुभ घटना गतिदीप्त कहलाती है।
7. स्थान दीप्त- किसी स्थान विशेष पर दृष्ट शकुन स्थानदीप्त कहलाता है।
8. भाव दीप्त- पशु-पक्षी, मनुष्य के हाव-भाव जनित शकुन इस श्रेणी में आते हैं।
9. स्वर दीप्त- पशु-पक्षी या मनुष्य या प्रकृति जन्य विशेष आवाज, शब्द व ध्वनि इस श्रेणी में आते हैं।
10. चेष्टा दीप्त- पशु-पक्षी या मनुष्य की असाधारण चेष्टा इस श्रेणी में आती है। ये सभी शकुन उत्तरोत्तर बली कहे गये हैं। इस प्रकार से अनेक विषय बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित है, जिससे इस ग्रन्थ का वैशिष्ट्य और अधिक बढ गया है।

3.4 सारांश

ज्योतिषशास्त्र के तीन स्कन्धों में सबसे प्राचीन व विस्तृत है - संहिता स्कन्ध। काल क्रम के अनुसार संहिता स्कन्ध संबंधित अनेक ग्रन्थों की रचना हुई। नारदसंहिता, अरुणसंहिता, सूर्यसंहिता, भृगुसंहिता, बादरायण संहिता, बार्हस्पत्य संहिता, गर्ग संहिता, गुरुसंहिता, बृहस्पति संहिता, महा संहिता, नारदीय संहिता, वाराही संहिता, रावण संहिता, बुद्धवसिष्ठ संहिता, लोमश संहिता, वृद्धगर्ग संहिता, गौतम संहिता आदि अनेक संहिता ग्रन्थ ज्योतिषशास्त्र में प्रचलित हैं। उनमें सबसे प्रमुख ग्रन्थ है – बृहत्संहिता। इस ग्रन्थ की रचना आचार्य वराहमिहिर ने छठी शताब्दी में की थी। इस ग्रन्थ में आचार्य वराहमिहिर ने संहिता के भेद एवं विषयवस्तु का विस्तार से विवेचन करते हुए निम्न विषयों का वर्णन किया है- 'सूर्य आदि ग्रहों के संचार, उस संचार में होने वाले ग्रहों का स्वभाव, विकार, प्रमाण (बिम्ब का परिमाण) वर्ण, किरण, द्युति (किरणक्रान्ति) संस्थान, ग्रहों के अस्त, उदय, मार्ग, मार्गान्तर, वक्र, अनवक्र, नक्षत्रों के साथ ग्रह समागम, चार एवं इनके फल, नक्षत्र-विभाग द्वारा बने हुये कूर्म-चक्र से देशों का शुभाशुभ फल, अगस्त्य का संचार, सप्तर्षियों का संचार, ग्रहों का भुक्ति (देश, द्रव्य, प्राणियों के आधिपत्य), नक्षत्रों के व्यूह, ग्रह-शृंगाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रहसमागम, 'ग्रह के वर्षपति होने पर उनका फल, गर्भलक्षण, रोहिणीयोग, स्वातियोग, आषाढ़ीयोग, वर्षाज्ञान, सद्योवर्षण, कुसुमलता का लक्षण, वृक्षों के फल-फूल की उत्पत्ति द्वारा संसारिक शुभाशुभ का ज्ञान, परिधि, प्रतिसूर्य का लक्षण, परिवेष परिघ, वायु लक्षण, उल्कापात, दिग्दाह का लक्षण व अभाव, भूकम्प, सन्ध्या की लालिमा, गन्धर्वनगर का लक्षण, धूलि का लक्षण, निर्घात लक्षण, अर्घकाण्ड, वस्तुओं की तेजी मन्दी का ज्ञान, अन्न की उत्पत्ति (कृषि विज्ञान), इन्द्रध्वज व इन्द्रधनुष का लक्षण, वास्तुविद्या (भवन-निर्माण कला का ज्ञान), अंगविद्या (अंग स्पर्श से प्राणियों के शुभाशुभ फल जानने की विद्या), वायस विद्या (काकचेष्टित), अन्तरचक्र, मृगचक्र (मृगचेष्टित), अश्वचक्र (घोड़ों की चेष्टा), वातचक्र, प्रासाद लक्षण, प्रतिमा लक्षण (मूर्ति विद्या), वृक्षायुर्वेद (वृक्षों की चिकित्सा), उदकार्गल (जल की उपलब्धि), नीराजन (मन्त्रों द्वारा शुद्धजल से वस्तुओं को पवित्र करना), खंजन लक्षण, विभिन्न उत्पातों की शान्ति, मयूर चित्रक, घृत, कम्बल, खड्ग पट्ट, कुक्कुट, कूर्म, गौ, अजा, कुत्ता, अश्व, हरित, पुरुष, स्त्री, अन्तःपुर की चिन्ता, पिटक, मोती,

वस्त्रच्छेद, चामर, दण्ड, शय्या, आसन, इनका लक्षण, रत्नपरीक्षा, दीपलक्षण, दन्तकाष्ठ आदि के द्वारा शुभाशुभ फल का लक्षण संसार के प्रत्येक पुरुष और राजाओं के पूर्वोक्त प्रत्येक लक्षण का विचार संहिता विभाग की विषयवस्तु है।

3.5 पारिभाषिक शब्द

सवितृलब्धवरप्रसादः = सूर्य द्वारा प्राप्त आशीर्वाद

दकार्गल = भूमि में स्थित जलशिराओं का ज्ञान

वृक्षायुर्वेद = वृक्षों की चिकित्सा

नीराजन = मन्त्रों द्वारा शुद्धजल से वस्तुओं को पवित्र करना

द्युति = चमक

वायस = कौआ

उत्पात = प्रकृति के विपरित घटित होने वाली विचित्र घटनाऐं

केतु = अहुताशे अनलरूपं केतुरूपमेवोक्तम्, यदि बिना अग्नि के भी अग्नि के लक्षण दिखाई दे उसे केतु कहते है,

3.6 सहायक पाठ्यसामग्री

1. बृहत्संहिता (संस्कृत एवम् हिन्दी अनुवाद) – चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, व्याख्या – पं. अच्युतानन्द झा
2. बृहत् संहिता (भाग -1 & 2) - डा. सुरेशचन्द्र मिश्र,
3. Varahamihiras Btihat Samhita- M. Ramakrishna Bhatt, Motilal BanarasiDas
4. India as seen in Brahatsamhita of Varahamihira – Ajay Mitra Shastri, Motilal BanarasiDas
5. Varahmihira – Rajesh Kumar Thakur, Prabhat Prakashan, 2020
6. आचार्य वराहमिहिर का ज्योतिष में योगदान - डा भोजराज द्विवेदी, रञ्जन पब्लिकेशन

3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. आचार्य वराहमिहिर का संक्षिप्त परिचय प्रदान करें
2. आचार्य वराहमिहिर रचित ग्रन्थों का संक्षित परिचय प्रदान करें
3. आचार्य वराहमिहिर को 'मिहिर' उपाधि किस प्रकार से प्राप्त हुई? वर्णन करें
4. बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित अध्यायों के नाम लिखे
5. बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित खगोल के विषयों का परिचय प्रदान करें
6. बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित ऋतु विज्ञान संबंधित विषयों का परिचय प्रदान करें
7. बृहत्संहिता ग्रन्थ में वर्णित शकुन संबंधित विषयों का परिचय प्रदान करें